ISSN-0974-0118

मेकल मीमांसा

अंतर-अनुशासनात्मक डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यूड यूजीसी केयर सूचीबद्ध अर्धवार्षिक शोध पत्रिका

वर्ष-13, अंक-02 जुलाई-दिसम्बर -2021

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक (म.प्र.)

ISSN-0974-0118

मेकल मीमांसा

अंतर-अनुशासनात्मक डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यूड यूजीसी केयर सूचीबद्ध अर्धवार्षिक शोध पत्रिका

वर्ष-13, अंक-02 जुलाई-दिसम्बर -2021

संरक्षक

प्रोफेसर श्रीप्रकाश मणि त्रिपाठी, कुलपति
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक, मध्य प्रदेश

प्रधान सम्पादक

प्रो. राघवेंद्र मिश्रा, प्रोफ़ेसर, पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग

कार्यकारी सम्पादक

प्रो. ज्ञानेंद्र कुमार राउत, प्रोफ़ेसर, शिक्षा शास्त्र विभाग
डॉ. टी. श्रीनिवासन, प्रोफ़ेसर, वनस्पति विज्ञान विभाग

सम्पादक मण्डल

डॉ. गौरी शंकर महापात्र, सह-प्राध्यापक, जनजातीय अध्ययन विभाग
डॉ. ललित कुमार मिश्र, सह-प्राध्यापक, मनोविज्ञान विभाग
डॉ. नीरज कुमार राठौर, सह-प्राध्यापक, संगणक विज्ञान विभाग
डॉ. एन सुरजीत कुमार, सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान और मानवाधिकार विभाग
डॉ. राहिल यूसुफ ज़ई, सहायक प्राध्यापक, व्यवसाय प्रबंध विभाग
डा. बिमलेश सिंह, सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग
डॉ. हरजीत सिंह, सहायक प्राध्यापक, भाषाविज्ञान विभाग
डॉ. ऋषि पालीवाल, सहायक प्राध्यापक, भैषजिक विज्ञान विभाग
डॉ. पूनम पांडेय, सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग
डॉ. आशुतोष कुमार, सहायक प्राध्यापक, भूविज्ञान विभाग

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक, मध्य प्रदेश

© इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, मध्य प्रदेश- 484887

सहयोग राशि: 300.00

प्रकाशक :
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय,
अमरकंटक, मध्य प्रदेश- 484887
http://www.igntu.ac.in/mekalmimansa.aspx

मुद्रक:
वाइकिंग बुक्स
G-13, एस०एस० टावर
धम्मानी स्ट्रीट, चौरा रास्ता
जयपुर, राजस्थान- 302003

डिज़ाईन:
न्यू विजन एंटरप्राइजेज

ध्यानार्थ:
मेकल मीमांसा राष्ट्रभाषा हिंदी में गुणवत्तापरक एवं मौलिक शोधपत्रों के प्रकाशन के माध्यम से ज्ञान के प्रदीपन और विस्तार हेतु संकल्पित है। मेकल मीमांसा डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यू पद्धति का अनुसरण करती है। पत्रिका लेखकीय गरिमा का सम्मान करती है। पत्रिका में प्रकाशित विचार और विश्लेषण लेखकों द्वारा प्रस्तुत हैं जो विषयवस्तु की मौलिकता एवं प्रमाणिकता हेतु उत्तरदायी हैं।

मेकल मीमांसा

अंतर-अनुशासनात्मक डबल ब्लाइंड पीयर रिव्यूड यूजीसी केयर सूचीबद्ध अर्धवार्षिक शोध पत्रिका

वर्ष-13, अंक-02 जुलाई-दिसम्बर -2021

इस अंक में

क्रम संख्या	लेख का शीर्षक	योगदानकर्ता	पृष्ठ संख्या
1.	विवेकी राय के उपन्यास साहित्य में व्यक्त आँचलिकता	प्रो. खेम सिंह डहेरिया	01-06
2.	भारत में महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण की समीक्षा	प्रो. राजबीर सिंह दलाल संदीप ढिल्लों	07-19
3.	गांधी और गांधीवादः एक विहंगम दृष्टिकोण	डॉ. अमित कुमार उपाध्याय	20-26
4.	ग्रामीण विकास के गांधीय प्रारूप की प्रासंगिकता: एक मूल्यांकन	देवेन्द्र प्रताप तिवारी, आलोक कुमार पाण्डेय	27-35
5.	डॉ. चंद्रप्रकाश द्विवेदी का साहित्यिक सिनेमा : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	मनोज कुमार भट्ट (मनोज लीला भट्ट), डॉ. दिग्विजय सिंह राठौर	36-43
6.	मूल्य शिक्षा संवर्धन में संस्कृति और परम्परा की भूमिका (भारत के विशेष संदर्भ में)	डॉ. परमात्मा कुमार मिश्र	44-50
7.	लोक वनस्पति विज्ञान में उपयोगी पेड़-पौधे (बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश के विशेष सन्दर्भ में)	डॉ. रोमिता देवी	51-57
8.	लांजिया सौरा जनजाति में सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन: एक सारगर्भित विश्लेषण	विक्रम कुमार जेना & देवी प्रसाद	58-67
9.	शोध एवं सांख्यिकी में आरओसी वक्र का अनुप्रयोग	एस. बालस्वामी	68-75
10.	प्राचीन श्रमण साहित्य में सामाजिक विमर्श	डॉ. जिनेन्द्र कुमार जैन	76-85
11.	कोविड-19 का भारतीय कृषि पर प्रभाव	डॉ. अंजनी श्रीवास्तव, डॉ. अविनाश कुमार श्रीवास्तव, डॉ. शालिनी श्रीवास्तव	86-96
12.	उपन्यास: संवेदना और सौन्दर्यशास्त्र	डॉ. प्रवीण कुमार	97-107
13.	समत्व योग: समकालिक विमर्श	प्रो. जितेन्द्र कुमार शर्मा	109-117
14.	प्राचीन भारतीय समाज एवं संस्कृति में आसन पीठिका के महत्व का अनुशीलन	डॉ . हरेराम पाण्डेय, प्रियंका कुमारी, प्रो. जे. एस. त्रिपाठी	118-123
15.	जे. कृष्णमूर्ति के दर्शन में सत्य और इसकी अभिव्यक्ति की पद्धति	डॉ. राकेश सोनी	124-136
16.	1834 से 1917 ई. के मध्य गिरमिटिया मजदूरों का समुद्रपारीय प्रवासन: एक अध्ययन	राजू कुमार, डॉ. आर. के. बिजेता	137-144

17.	तुरतुरिया, बलौदाबाजार (छत्तीसगढ़) से प्राप्त प्राचीन मूर्तिशिल्प एवं वास्तुखण्ड का विवेचन	हेमन्त कुमार वैष्णव	145-153
18.	सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन एवं राष्ट्र निर्माण	डॉ. सुशील कुमार राय	154-161
19.	आदिवासी समाज में धर्मांतरण की समस्या और हिन्दी उपन्यास	डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय	162-168
20.	अण्डमान द्वीप समूह के मूल निवासियों का एक परिचय	प्रमोद कुमार	169-178
21.	भारत और दक्षिणी अफ्रीकी देशों के मध्य व्यापारिक सम्बन्ध का विश्लेषणात्मक अध्ययन	जय प्रकाश यादव, डॉ. बिमलेश सिंह	179-193
22.	21वीं सदी और आदिवासी महिला शिक्षा	डॉ. संजय यादव	194-203
23.	गोंड़ जनजाति में मोबाइल फोन के प्रयोग का अध्ययन	सन्नी कुमार गोंड़, प्रो. मनीषा शर्मा	204-211
24.	शासकीय एवं अशासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत बालिकाओं की अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन	डॉ. बीना सिंह	212-219
25	स्वामी विवेकानन्द का समाजवादी दर्शन	डॉ. अम्बुजेश कुमार मिश्र	220-226
26	पं. दीनदयाल उपाध्याय और अटल बिहारी वाजपेयी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का तुलनात्मक अध्ययन	डॉ. महेश कुमार सिंह	227-236
27	राष्ट्रीय शिक्षा एवं नीति व विधि शिक्षा	डॉ. प्रियरंजन कुमार	237-245

आदिवासी समाज में धर्मांतरण की समस्या और हिन्दी उपन्यास

डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय*

सारांश

भारत में आदिवासियों के धर्मांतरण का मुद्दा प्रायः विवादों में रहा है। औपनिवेशिक शासनकाल में ईसाई मिशनरियों ने अपने वर्चस्व की स्थापना के लिय बड़े पैमाने पर धर्म का सहारा लिया। वहीं आजादी के बाद अनेक संगठनों द्वारा आदिवासियों को हिन्दू धर्म की मुख्य धारा में पुनः लौटाने के प्रयास हुए हैं जिसे घर वापसी की संज्ञा दी जा रही है। इन सबके बीच आम आदिवासी की रोजमर्रा जिंदगी से जुड़े मूलभूत प्रश्न नदारद हैं। वह आज भी अपने जीवन की बेहतरी के लिए लगातार संघर्षरत है। धर्मांतरित आदिवासी अपनी संस्कृति को छोड़कर पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने लगे हैं जिससे आदिवासी लोक संस्कृति बड़े पैमाने पर प्रभावित हुई है। धर्मांतरण की प्रक्रिया को तेज करने में चर्च के संगठन की मजबूती, राजसत्ता का सहयोग और विदेशों से पर्याप्त धन की उपलब्धता ने बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। भारत में आदिवासियों की गरीबी, अलगाव और अशिक्षा ने भी धर्मांतरण ही प्रक्रिया को लाभ पहुँचाया है।

मूल शब्द : आदिवासी, धर्मांतरण, अशिक्षा, लोक-संस्कृति, फंडामेंडलिस्ट

प्रस्तावना

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जनजातियों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। भारत में जनजातियों की आबादी अफ्रीका के बाद दुनिया में सर्वाधिक है (वर्मा, 2003, पृ. 1)। ऐसा विश्वास किया जाता है कि यह लोग भारतीय प्रायद्वीप के मूल निवासी हैं। मूल निवासी होने के कारण ही इन्हें सामान्यतया 'आदिवासी' कहा जाता है। भारत में आदिवासियों के धर्मांतरण का मुद्दा प्रायः विवादों में रहा है। औपनिवेशिक शासनकाल में ईसाई मिशनरियों ने अपने वर्चस्व की स्थापना के लिय बड़े पैमाने पर धर्म का सहारा लिया। वहीं आजादी के बाद अनेक संगठनों द्वारा आदिवासियों को हिन्दू धर्म की मुख्य धारा में पुनः लौटाने के प्रयास हुए हैं जिसे घर वापसी की संज्ञा दी जा रही है। इन सबके बीच आम आदिवासी की रोजमर्रा जिंदगी से जुड़े मूलभूत प्रश्न नदारद हैं।

धर्मान्तरण के कारण एवं दुष्प्रभाव

अनेक विद्वानों का मानना है कि जनजातियों में धर्मांतरण की समस्या मुख्यतः ईसाई धर्म से संबधित रही है, क्योंकि हिन्दू धर्म अत्यंत प्राचीन काल से ही देश में विद्यमान रहा है और भारत में उत्तर-पूर्वी क्षेत्र की जनजातियों के अतिरिक्त देश की अधिकांश जनजातियाँ हिन्दू धर्म से बहुत अधिक प्रभावित रही हैं। मजूमदार और हट्टन जैसे विद्वानों ने तो जनजातीय धर्म 'जीववाद' को हिन्दू धर्म से बहुत कुछ प्रभावित और पूरक तक सिद्ध किया है। एल्विन ने भी अपने विभिन्न निबंधों में जनजातीय धर्मों तथा हिन्दू धर्म में भेद

*सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय बलरामपुर, रामानुजगंज (छ.ग.)।

करने की व्यर्थता की ओर संकेत किया है। यह बातें यह प्रमाणित करती हैं कि हिन्दू धर्म और जनजातीय धर्मों में कोई विशेष विरोधाभास नहीं रहा है। इसलिए धर्मांतरण जैसे प्रयास हिन्दुओं द्वारा नहीं के बराबर हुए हैं। हिन्दू धर्म एक धर्मांतरणकारी धर्म नहीं रहा है (हसनैन, 2004, पृ. 75)। हाँ, एक बात यहाँ महत्त्वपूर्ण है कि तथाकथित सभ्य समाज ने जनजातियों को सदैव उपेक्षा की दृष्टि से देखा और उनके विकास के अवसरों को सीमित किया। इस सामाजिक विषमता ने ईसाईयों द्वारा किए गए धर्मांतरण के लिए उत्प्रेरक का कार्य किया। ब्रिटिश शासन काल में ईसाई मिशनरियों ने जनजातीय इलाकों में प्रवेश कर अनेक प्रकार के सामाजिक तथा आर्थिक प्रलोभन देकर आदिवासियों को धर्म परिवर्तन के लिए बाध्य किया। इस घटना के परिणामस्वरूप बहुत सी जनजातियाँ ईसाई बन गईं। धर्मांतरण के पीछे मुख्य कारण सामाजिक व्यवस्था में ऊँचा स्थान प्राप्त करने की आशा, आर्थिक समृद्धि आदि हैं। धर्मांतरण से आदिवासियों की स्थिति में कोई उल्लेखनीय सुधार तो नहीं हुआ, हाँ इससे उनकी पारंपरिक जीवन शैली और जीवन आधार बहुत गहरे तक प्रभावित हुआ। जनजातीय लोग अपनी संस्कृति को छोड़कर पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने लगे। इससे जनजातियों की पारंपरिक संस्कृति और कला का व्यापक पैमाने पर क्षरण हुआ।

धर्मांतरण के कारण दूसरी समस्या भाषा के स्तर पर सामने आयी। मिशनरियों ने रोमन लिपि के माध्यम से शिक्षा देना प्रारंभ किया। जिसके प्रभाव के कारण आदिवासी अपनी बोली-भाषा धीरे-धीरे भूलते गए। इससे जनजातियों की सांस्कृतिक एकता में बाधा उत्पन्न हुई। इसके अलावा बाहरी संपर्क के परिणामस्वरूप मुद्रा के प्रचलन ने जनजातीय वस्तु-विनिमय प्रथा को काफी धक्का पहुँचाया। ईसाई धर्म ग्रहण करने के बाद जनजातियों का एक बड़ा भाग जब अपनी संस्कृति की मूल धारा से अलग हो गया तो इससे सामाजिक पृथक्करण को प्रोत्साहन मिलने लगा। धर्मान्तरण के कुछेक मामलों में स्वगत प्रेरणा भी कारण रहा है लेकिन अंतःप्रेरणा और धर्म की बारीकियों से प्रभावित होकर धर्म बदलना इतने बड़े पैमाने पर संभव नहीं है। धर्मांतरण की प्रक्रिया को तेज करने में चर्च के संगठन की मजबूती, राजसत्ता का सहयोग और विदेशों से पर्याप्त धन की उपलब्धता ने बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। भारत में आदिवासियों की गरीबी, अलगाव और अशिक्षा ने भी धर्मांतरण की प्रक्रिया को लाभ पहुँचाया।

हिन्दी उपन्यासों में धर्मान्तरण की समस्या

धर्मांतरण की समस्या को हिन्दी के विभिन्न उपन्यासों में उठाया गया है। बस्तर क्षेत्र के जनजातीय जीवन की पृष्ठभूमि पर लिखे गए उपन्यास 'सूरज किरन की छांव' में इस समस्या के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पहलुओं की गहन पड़ताल की गयी है। आदिवासियों की गरीबी को हथियार बनाकर अक्सर उनको बरगलाया जाता रहा है। 'सूरज किरन की छांव' उपन्यास में चर्च का पादरी जरपन भोई से कहता है कि - तुम्हारा धर्म कैसा है ? तुम्हारे लोग कैसे हैं ? तुम जैसा हट्टा-कट्टा आदमी भूखों मर जाय और तेरी जाति वालों के कान में जूँ तक न रेंगे। यदि हमारे धर्म में तू आ जाय, तो जिंदगी भर आराम से खाएगा। जहाँ तेरा पसीना बहेगा हम अपना खून बहा देंगे (अवस्थी, 1979, पृ. 32)। चर्च के पादरी की गतिविधियों के बारे में लेखक आगे लिखता है कि- पादरी अक्सर आसपास के गांव जाता रहता था। वहाँ रहने वाले क्रिश्चियनों के सुःख-दुःख की जानकारी करता था। कितने इस जमात में मिले, उसकी पूछताछ करता था। खुद उपदेश देता और अपनी बड़ी-बड़ी बातों से देहातियों को चकरा देता। जो काम दूसरे ईसाई महीनों में न कर पाते, पादरी पल भर में हल कर देता (अवस्थी, 1979, पृ. 39)। यहाँ पर हम देखते हैं कि

किस तरह एक पादरी आदिवासियों की गरीबी और सीधेपन का फायदा उठाकर अपने धर्म का महिमामंडन करता है। उपन्यास में कई जगहों पर ईसाई धर्म का गुणगान उसके अनुयायियों द्वारा किया गया है। ईसाई महिलाओं और बेंजो जोसेफ जो कि एक धर्मांतरित गोंड़ युवती है के बीच संवाद होता है-

पहली बोली, "यहोबा अपना सबसे बड़ा भगवान है।''
"बड़ा महादेव से भी बड़ा ?" बेंजो जोसेफ ने पूछा।
वह बोली, कौन महादेव ? वह भी कोई देवता है? पत्थर में भला देव रहता है ? यह जंगली जाने क्या-क्या पूजते हैं। हर झाड़ को देव-हर पत्थर को भगवान।''
दूसरी बोली, हाँ, बेंजो, उससे भी बड़ा, दुनियाभर में बड़ा, उससे बड़ा कहीं कोई नहीं (अवस्थी, 1979, पृ. 44)।''

इस उपन्यास में ऋणग्रस्तता को भी धर्मांतरण की एक बड़ी वजह के रूप में चित्रित किया गया है। आदिवासी प्रायः गरीब होते हैं और वक्त पड़ने पर साहूकारों और जमींदारों से कर्ज लेते रहते हैं। दूर-दराज के क्षेत्रों में चर्च के लोग भी यह कार्य करते हैं। वहाँ पर आदिवासियों के कल्याण से अधिक उन्हें अपना ऋणी बना लेने की भावना अधिक कार्य करती है जिससे कि वह गरीब आदिवासियों को दबाव में ला सकें। उपन्यास में बैगा जनजाति की एक स्त्री बेंजो से अपनी दारुण कहानी सुनाते हुए कहती है- आठ-दस बरस पहले मेरे ससुर ने चरच से करजा लिया था। वह मर गया, करजा न पट सका। पटता भी कैसे ? बीस से चालीस जो हो गया। रोज-रोज का गोदना, सहन के बाहर हो गया। एक दिन एक नरस ने कहा, एक लड़का क्यों नहीं दे देती, सब करज पट जाएगा।' लड़का दे दूँ - मैं सोच रही थी कि उसने (पति ने) हामी भर दी (अवस्थी, 1979, पृ. 73)। वास्तव में यह कितना अफसोसजनक है कि ऋणों से मुक्ति के नाम पर आदिवासी लोगों को चर्च की आजीवन सेवा के लिए अपनी संतान तक भेंट करनी पड़ती है। यह घृणित होने के साथ-साथ अमानवीय भी है। बैगा स्त्री आगे बेंजो से कहती है- पादरी कहता था, अबकी बेर करज न उतारा, तो ईसाई बनना पड़ेगा। जाने कितने दिनों से वह हमारे पीछे पड़ा है, जाने कितने लोगों को भेजता है, सब कहते हैं ईसाई हो जाओगे तो जिंदगीभर चैन रहेगा (अवस्थी, 1979, पृ. 74)। इस तरह की मानसिकताएँ निश्चित रूप से यह प्रमाणित करती हैं कि ईसाई धर्म ने बलपूर्वक और रणनीति के तहत आदिवासियों का धर्मांतरण किया और सामाजिक सेवा के नाम पर अपने अनुयाइयों की संख्यावृद्धि में लगे रहे।

'सूरज किरन की छांव' उपन्यास में गरीबी की आड़ में धर्मान्तरण की प्रवृत्ति को भी दर्शाया गया है। देश के ज्यादातर हिस्सों में आदिवासी गरीब, बेरोजगार और तमाम मूलभूत सुविधाओं से हीन थे। ईसाई मिशनरियों ने इस स्थिति का लाभ उठाया और आदिवासियों को ईसाई धर्म में दीक्षित होकर तमाम कष्टों से छुटकारा मिलने का दुष्प्रचार किया। आर्य समाज के लोगों द्वारा ईसाईयों को पुनः हिन्दू धर्म में दीक्षित करने की आशंका को लेकर मरियम जोसेफ से कहती है-''मैंने एक बात और सुनी है, जोसेफ!'' ''क्या ?" जोसेफ ने पूछा। वह बोली, आयर समाज के कुछ लोग आने वाले हैं, वे ईसाईयों की भी जात-बदल करते हैं। उन्हें फिर हिन्दू बनाते हैं।'' ''तुम भी पागल हुई हो, मरियम।'' जोसेफ ने कहा, पैसा बिना दुनिया में क्या धरा है। वह तो पानी है, पानी। एक बूँद न मिले, तो बेड़ा पार। कहां से जुटायेंगे यह आयर समाजी इत्ता पैसा और ईसाई कब तक हिन्दूपन धरेंगें। जब भूखों मरेंगें तो पादरी के ही पैर पकड़ेंगे। तुम्ही बताओ, ऐसा न होता तो हम क्यों इस धरम में आते ? (अवस्थी, 1979, पृ. 84)। उपन्यास में आगे पुनः पैसे

के बल पर होने वाले धर्मान्तरण पर ग्रेसरी बेंजो जोसेफ से कहती है- पागल हुई हो, भाभी। यहां सबको ईसाई पैसों के बल पर बनाया जाता है। आदमी के पास पैसे रहें, तो कोई ईसाई न बने। यदि यह पैसा देना बंद कर दें तो लोग ईसाईयत से बदल जायें। जब आदमी का पेट तड़पता है और जेब खाली रहती है, तब वह धरम नहीं देखता (अवस्थी, 1979, पृ. 107)।

धर्मान्तरण की समस्या पर 'नदी के मोड़ पर' उपन्यास में भी टिप्पणी की गई है। लेखक वहां पर आदिवासियों की गरीबी और ईसाई मिशनरियों की स्वार्थपरकता को इसके लिए सर्वाधिक दोषी करार देता है। लायंस क्लब के लोग ईसाई मिशनरियों के संबंध में कहते हैं- अंग्रेज तो चला गया, लेकिन यह पादरी देश को भ्रष्ट कर रहे हैं। रोटियां बांटने के बहाने धर्म परिवर्तन करते हैं और विदेशी पैसों से जासूसी करते हैं। हिन्दुस्तान के मिलिट्री के अड्डे और एटम बम के फार्मूले बाहर भिजवाते हैं। पता नहीं इन पर सरकार की कड़ी नजर क्यों नहीं है (सदन, 1979, पृ. 125)।

धर्मान्तरण की समस्या पर 'पठार पर कोहरा' उपन्यास में भी लेखक विचार करता है। लेखक कहता है कि धर्मान्तरण की वजह से आदिवासियों में घोर असुरक्षाबोध का जन्म हुआ। आदिवासियों की मूल जीवन शैली, संस्कृति और परंपराओं पर प्रहार ने ईसाई मिशनरियों के प्रति आक्रोश उत्पन्न किया और झारखंड में बिरसा मुण्डा के नेतृत्व में आदिवासियों ने महान विद्रोह किया-मुण्डा जीवन में ईसाईयत और मिशनरियों का अनावश्यक हस्तक्षेप ही वह बुनियादी मुद्दा रहा था जो तत्कालीन ब्रिटिश सरकार की अदूरदर्शिता और ईसाई पक्षधरता के कारण विरोध के फोड़े से विद्रोह का नासूर बन गया था। फिर यह असंतोष, असुरक्षाबोध, जातीय अस्मिता का उद्घोष और मुण्डाओं का अमर्ष उलगुलान के रूप में लगभग पूरे झारखण्ड में ही दावाग्नि की भाँति व्याप्त हो गया था (सिंह, 2005, पृ. 161)। उपन्यास में लेखक धर्म को तभी तक जीवन के लिए उपयोगी मानता है जब तक कि वह लोगों की अंतःप्रेरणा से संचालित होता है। लेखक लिखता है कि -धर्म जब तक कि जनभावनाओं से संचालित होता है, जीवन जीने का आदर्श होता है। परन्तु जब धर्म राज्य, मठ या किसी धर्माधिकारी के फतवों से संचालित होने लगता है, वह विकृतियों का शिकार होने लगता है (सिंह, 2005, पृ. 173)।

काला पादरी और धर्मान्तरण की राजनीति

तेजिन्दर द्वारा लिखित 'काला पादरी' उपन्यास में धर्मान्तरण की समस्या और उस पर होने वाली राजनीति को सबसे सशक्त ढंग से उठाया गया है। 'काला पादरी' ईसाई मिशनरी की कार्यप्रणाली, उसके प्रबंध तंत्र, युवा मिशनरियों की सोच और उनके द्वंद्व की छानबीन के साथ धर्मान्तरण के मुद्दे की इस तरह से पड़ताल करता है कि मिशनरी समाज के उद्देश्यों की कई नई परतें खुलने लगती हैं। उपन्यास में आदित्य जब फादर मैथ्यूज़ से ईसाई मिशनरियों द्वारा किए जाने वाले धर्मान्तरण पर सवाल उठाता है तो फादर मैथ्यूज़ तर्क देते हैं- इनके पास ईश्वर का कोई इमेज नहीं था डियर, जिसकी ओर यह आस भरी निगाह के साथ देख सकें, जब हम यहां आया तो राजा भी अपना देवी को प्लांट कर रहा था। यू नो हाउ टू प्लांट ए थाट, इट इज वैरी इम्पार्टेंट, हमने भी प्रभु यीशु की इमेज़ प्लांट कर दी, इट वाज़ ए वार ऑफ इमेज़ेज, जिसमें जीत हमारी हुई (तेजिन्दर, 2005, पृ. 44)। इस तरह फादर मैथ्यूज वर्चस्व की लड़ाई में अपनी जीत को धर्म की जीत और धर्म की श्रेष्ठता के रूप में साबित करने की कोशिश करते हैं। लेकिन उनका ही अनुयायी जेम्स खाखा जिसके बाप-दादे कभी कन्वर्टेड हुए थे फादर मैथ्यूज की इस मानसिकता पर प्रति प्रश्न करता है- क्या यह सच नहीं कि हमारी इमेज़ेज में पहाड़ थे, नदियां थीं, पेड़ थे, शेर थे, चीते थे और राजा ने हमें बंधुआ बना

दिया, फिजिकली और इक्नॉमिकली एक्सप्लायट किया, लेकिन आपने क्या किया ? यू रादर टेम्ड अस, आपने हमें पालतू बना दिया, हमारे लिए हिंदू फंडामेंटलिस्टों और आपमें अब कोई खास फर्क नहीं है। हमारी सारी इमेज़ेज छीन लीं आप लोगों ने .... (तेजिन्दर, 2005, पृ. 45)। जेम्स खाखा का यह प्रश्न मिशनरी कार्य में लगे युवा मिशनरियों के मन में उठते सवालों को व्यापक फलक प्रदान करता है, यहां पर लेखक यह संकेत देता है कि चर्च के कार्यों में लगी युवा पीढ़ी गहरे असंतोष की शिकार है। जेम्स की प्रतिक्रिया पर फादर कहते हैं- बट यू हैव टु पे द प्राईज़ फॉर एवरी थिंग यू गैट। इस बात पर अपना असंतोष जाहिर करते हुए जेम्स खाखा कहता है- सो यू आर मोर ए बिज़नेसमैन दैन प्रीस्ट (तेजिन्दर, 2005, पृ. 45)। 'काला पादरी' बार-बार स्पष्ट करता है कि धर्मान्तरण के बाद की तीसरी पीढ़ी धर्म को उस सहजता से स्वीकार नहीं कर पा रही है जिस सहजता से पहली पीढ़ी ने स्वीकार किया था।

दरअसल जो पहली पीढ़ी मिशनरियों के प्रभाव में ईसाई बनी थी उसकी लड़ाई भूख से थी। ईसाईयत स्वीकार करना वस्तुतः उनके लिए भूख से मुक्ति का माध्यम था। भूख से मुक्ति के बाद की अगली पीढ़ी तो खुद को पूरी तरह ईसाई बनाने में ही व्यस्त रही लेकिन जेम्स खाखा की पीढ़ी के मन में अब चर्च के कार्यों में व्याप्त विसंगतियों को लेकर ढेरों सवाल पैदा हो रहे हैं। जेम्स खाखा फादर मैथ्यूज़ के संबंध में आदित्य से कहता है-फादर मैथ्यूज़ से मैं जब भी मिलता हूँ, वे हमें हमारे बौनेपन की याद दिलाते हैं (तेजिन्दर, 2005, पृ. 46)। इस तरह हम देखते हैं कि वर्षों पूर्व धर्मान्तरित हुए आदिवासियों में आज अपनी स्थिति को लेकर गहरा असंतोष है। अपने असंतोष को आगे पुनः आदित्य से जाहिर करते हुए जेम्स कहता है- मां कहती है कि चूंकि चर्च ने तुम्हारे पिता और दादा को रोटी दी थी, काम दिया था और राजा की बेगार से मुक्ति दिलवायी थी, इसलिए तुम्हें अपना पूरा जीवन चर्च की सेवा में बिताना है। क्या यह एक तरह का बंधुआ विचार नहीं है (तेजिन्दर, 2005, पृ. 47)। जेम्स खाखा अपना विरोध प्रकट करते हुए आदित्य से फिर कहता है-आखिर एक-दो पीढ़ी पहले तो हमें अपने अस्तित्व का पता नहीं था ठीक से, और अब जब पता चल गया है तो कहते हैं कि भूल जाओ, तुम्हारा कुछ नहीं है, जो कुछ है प्रभु परमेश्वर का है और परमेश्वर का रास्ता मिशनरीज से होकर जाता है, माई फुट, मैं कहता हूँ, परमेश्वर का रास्ता हमारी छोटी-सी नदी ईब से होकर गुजरता है, हमारे पेड़ों और पहाड़ों से होकर जाता है, और तो और सोज़ेलिन मिंज की आंखों से होकर जाता है (तेजिन्दर, 2005, पृ. 48)। इस तरह हम देखते हैं कि जहाँ जेम्स खाखा की टिप्पणियाँ उसे विशिष्ट चरित्र बनाती हैं वहीं उपन्यास में कई ऐसे प्रसंग हैं जो इस तरह के मनोभावों को सहजता से उजागर करते हैं। आदित्य जब लुईसा टोप्पो नामक युवती से पूछता है कि उसके पिता क्या करते हैं, तो उसका जवाब होता है कि वे यीशु के मंदिर में प्रार्थना की बेगार कराते हैं (तेजिन्दर, 2005, पृ. 53)। यानी खेतों में बेगार करने वालों का उपयोग अब प्रार्थना के बेगार में हो रहा है।

'काला पादरी' में अतिवादियों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों को भी तेजिन्दर ने अपने उपन्यास का विषय बनाया है। यह संगठन आदिवासियों को प्रायः 'वनवासी' नाम से संबोधित करते हैं। वनवासी कल्याण आश्रम की आड़ में यह संगठन भोले-भाले आदिवासियों को सांप्रदायिकता के जहर में ढाल की तरह इस्तेमाल करते हैं। तेजिन्दर उपन्यास में यह दिखलाने की स्पष्ट कोशिश करते हैं कि किस प्रकार अतिवादी 'घर वापसी' कार्यक्रम के तहत समाज में द्वेष और वैमनस्य फैला रहे हैं। उनके निशाने पर चर्च और मिशनरियां हैं लेकिन इनके बीच पिस रहे हैं आम आदिवासी। अतिवादी जगह-जगह आदिवासियों के बीच इस तरह के धमकी भरे शब्दों का प्रयोग करते हैं-'विदेशी धन पर अपना धर्म बेचने वाले गद्दारों, वापस आ जाओ' और 'यहां रहना है तो हिन्दू बनकर रहना होगा (तेजिन्दर, 2005, पृ . 80)।' निश्चय ही

अतिवादियों की यह मानसिकता सामासिक संस्कृति और धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र के भविष्य के लिए शुभ नहीं है।

'काला पादरी' में सिर्फ चर्च की धार्मिक सत्ता का विश्लेषण नहीं है, वहाँ अंबिकापुर का 'पैलेस' भी है जो यूँ तो सत्ता का प्रतीक है लेकिन आजकल उसके दिन ठीक नहीं हैं क्योंकि प्रदेश में हिंदूवादी पार्टी की सरकार है। यानी 'पैलेस' एक तरह से धर्मनिरपेक्षता का पक्षधर होने का दावा करता है। लेकिन उसकी धर्मनिरपेक्षता की क्या परिभाषा है। वह उपन्यास में बार-बार जाहिर होता रहता है। हिन्दूवाद के उभार से जहाँ चर्च परेशान है, वहीं 'पैलेस' की व्यथा भी कम नहीं है। 'पैलेस' और चर्च के बीच अच्छा तालमेल भी है। अंबिकापुर क्षेत्र में सूखे का प्रकोप है और लोग भूख से मर रहे हैं। चर्च के पास खाद्यान्न का पर्याप्त भंडार है लेकिन बिना 'पैलेस' की अनुमति के वह भूख से पीड़ित लोगों में उन्हें वितरित नहीं करना चाहता। चर्च और 'पैलेस' दोनों की मंशा है कि जब भूख से कुछ लोग मर जाएँ, जनता त्राहि-त्राहि करने लगे तो यह हिंदूवादी सरकार खुद-ब-खुद एक्सपोज हो जाएगी। उस समय जनता को इन्हें वोट देने की गलती का अहसास होगा और तब 'पैलेस' के इशारे पर चर्च आदिवासियों और गरीबों में अनाज का वितरण करेगी। इन धर्मनिरपेक्ष ताकतों का मानवता के प्रति क्या दृष्टिकोण है साफ दिख जाता है (झा, 2002, पृ. 243)। षडयंत्र उस समय और स्पष्ट हो जाता है जब इस संबंध में बिशपस्वामी जेम्स खाखा से कहता है कि- "मतलब साफ है। हमारा अपना इंटरेस्ट हमारे लिए सबसे बड़ा है। वी हैव टू ब्रिंग मैक्सीमम पीपल इन अवर फोल्ड दैट इज अवर ड्यूटी फॉर व्हिच गॉड हैज़ सैंट अस टू दिस अर्थ, इसके लिए अगर कुछ लोग भूख से मर जाते हैं तो वह भी प्रभु की इच्छा है।" जेम्स खाखा को एकाएक विश्वास नहीं हुआ कि यह वही बिशपस्वामी हैं जो हर रविवार की सुबह गिरिजाघर में सभी मनुष्यों के प्रति प्रेम और क्षमा की बात करते हैं और कहते हैं, प्रभु इन्हें क्षमा कर देना, यह नहीं जानते कि यह क्या कर रहे हैं (तेजिन्दर, 2005, पृ. 124)। इस तरह हम देखते हैं कि हर तरफ राजनीति हो रही है और सब अपने-अपने हितों के लिए काम कर रहे हैं, आम आदिवासी की चिंता किसी को नहीं है। वह सब तरफ से पिस रहा है।

निष्कर्ष

कहना न होगा कि धर्मांतरण जैसी प्रक्रियाओं से परंपरागत आदिवासी संस्कृति में व्यापक पैमाने पर संक्रमण पैदा हुआ है और अंततः उनका ही नुकसान हुआ है। ईसाई मिशनरियाँ जो कर रही हैं वह निश्चय ही गलत है क्योंकि दर्शन, अध्यात्म और धर्म जैसी चीजें चेतना के उच्च विकास की अवस्थायें हैं, अभी तो वह रोटी-पानी के मोहताज हैं और अगर वह रोटी देकर दूसरे हाथ में बाइबिल थमा रहे हैं तो वह भी उतने ही दोषी हैं जितने कि वह लोग जो उनका पांव पूजकर उनको वापस मुख्य धारा में लाने की कोशिश कर रहे हैं। उसके बाद उन्हें छोड़ देते हैं, भूल जाते हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि आदिवासियों को स्वाभाविक विकास के अवसर उपलब्ध कराए जायें जिससे वह अपनी संस्कृति को सुरक्षित रखते हुए समाज की मुख्य धारा में शामिल हो सकें।

संदर्भ सूची

वर्मा, रूपचंद (2003). *भारतीय जनजातियां*. नई दिल्ली: प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।

हसनैन, नदीम (2004). *जनजातीय भारत*. नई दिल्ली: जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीव्यूटर्स।
अवस्थी, राजेन्द्र (1979). *सूरज किरण की छांव*. नई दिल्ली: पराग प्रकाशन।
सदन, दामोदर (1979). *नदी के मोड़ पर*. नई दिल्ली: पराग प्रकाशन।
तेजिन्दर, काला पादरी (2005). नई दिल्ली: नेशनल पेपरबैक्स।
झा, विमल (2002). *मानसिकता का छद्म (लेख), पुस्तकवार्ता, नवंबर-दिसंबर*. वर्धा: महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय।
सिंह, राकेश कुमार (2005). *पठार पर कोहरा*. नई दिल्ली: भारतीय ज्ञानपीठ।